आदिवासी कविताओं में स्त्री अस्मिता

डॉ. भारती लक्ष्मी पाल
अतिथि प्राध्यापिका, हिंदी विभाग
गुलबर्गा विश्वविद्यालय, कलबुरगी, कर्नाटक
एवं के.बी.एन. विश्वविद्यालय, कलबुरगी, कर्नाटक
दूरभाष: 8050909991 ईमेल : bharatilaxmi1@gmail.com

शोधसार:
आदिवासी साहित्य आदिवासी अस्मिता की बात करता है। यह सहअस्तित्व, सहजीविता में विश्वास रखता है। आदिवासी साहित्य में काव्य लेखन बहुत पुरानी परमपरा है। इसकी पृष्ठभूमि मौखिक साहित्य ही रहा है। हिंदी की पहली कवयित्री सुशीला सामद,1930-40 के दशक में रही हैं। आदिवासी कविता के माध्यम से स्त्री अस्मिता की बात कही गयी है। आदिवासी स्त्री, आदिवासी समाज के साथ-साथ आम समाज में भी अपनी बराबरी का हक चाहती है। वे अपने अस्मिता के लिए दोनों समाजों से लड़ती हुई दिखाई देती है। ज्यादातर आदिवासी समुदाय में उनको बराबरी का हक मिला है लेकिन कुछ में पुरुष वर्चस्व देखने को मिलता है। उनका अस्तित्व आज भी संकट में है। स्त्री अपने अनुभवों को ही कविता के माध्यम से प्रकट करती है। वह अपने आप को देवी के रूप में नहीं मनुष्य के रूप में समाज में खड़ा करना चाहती है। घर-परिवार में अपने कर्त्तव्य के अलावा वह अपनी खुद की पहचान व अस्तित्व चाहती है, जिसको सामाजिक स्वीकृति मिलना आवश्यक है। आदिवासी कविता उनके अनुभवों को व्यक्त करने का एक माध्यम है।

बीज शब्द: स्त्री अस्मिता व अस्तित्व, आदिवासी जीवन, संघर्ष, दुःख -दर्द, स्त्री विद्रोह, बुनियादी हक

आमुख: नारी अस्मिता अर्थात नारी स्वतन्त्रता, इसका मतलब यह नहीं कि समाज से अलग नारी स्वतंत्रता, इसका मतलब यह है कि वह किसी और के अधीन न होकर स्व-अधीन रहना चाहती है। समाज में सकारात्मक बदलाव के लिए नारी पुरुष के साथ-साथ चलना चाहती है, वह चाहे सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आदि स्थिति में क्यूँ न हो। आदिवासी हिंदी कविता में स्त्री अस्मिता को व्यक्त करने वाले प्रमुख कवियों में हैं – निर्मला पुतुल, ग्रेस कुजूर, वंदना टेटे, सरिता बड़ाईक, रमणिका गुप्ता, अनुज लुगुन, सुशीला सामद आदि। वैश्वीकरण के दौर में आज स्त्री केवल भोग की वस्तु समझी जाती है। वह अपना पूरा जीवन परिवार और समाज को समर्पित कर देती है लेकिन समाज उसको प्रताड़ित करता रहता है। आदिवासी स्त्रियाँ अपनी अस्मिता केलिए संघर्षरत हैं। पुरुषवादी सत्ता नारी को गुलामी की बेड़ियों में जकड कर रखना चाहता है। पुरुष की हर इच्छा वह पूरी करती है किन्तु वह उसकी इच्छाओं का दमन कर देती हैं। वह अपने परिवार के लिए बिना थके ही काम करती रहती है फिर भी उसको वह सम्मान नहीं मिलता जो मिलना चाहिए। निर्मला पुतुल ने आदिवासी स्त्री की पीड़ा को अपनी कविता 'क्या हूँ मैं तुम्हारे लिए' में लिखती हैं कि –

"क्या हूँ मैं तुम्हारे लिए
एक तकिया
कि कहीं से थका- मांदा आया
और सिर टिका दिया
.....
कोई डायरी /कि जब चाहा
कुछ न कुछ लिख दिया
खामोश खड़ी दीवार
की जब जहाँ चाहा
कील ठोक दी
कोई गेंद /कि जब तक
जैसे चाहा उछाल दी
या कोई चादर/कि जब जहां जैसे-तैसे
ओढ-बिछा ली ?" (1)

औद्योगीकरण के नाम पर आदिवासियों को छला जा रहा है। उनसे जल, जंगल और जमीन छीने जा रहे हैं। उनको मजदरी के लिए विवश किया जा रहा है। आदिवासी स्त्रियाँ अपने घर की आर्थिक हालत को देखते हुए शहर में मजदरी करने के लिए विवश हो जाती हैं किन्तु उनके साथ वहाँ प्रगति के नाम पर शोषण और अत्याचार किया जा रहा है। आदिवासी स्त्रियों को देह मात्र समझ कर उनके साथ दुष्कर्म करते हैं, या फिर बेच दिया जाता है। इसके चलते वह कभी घर वापस नही आ पाती। इस दुःख को प्रकट करती हुई कवयित्री सरिता बड़ाईक अपनी कविता 'बेटी और नागफनी' में लिखती हैं कि –

"श्मशान जाने से पहले
नागफनी कांटे से
भेदे गये हथेली और पाँव
उरवा-सुतरी से बाँधी गई बेटी
सरसों छींटी गई
घर से श्मशान तक
कांटे चुभे पाँव से सरसों न चुन सके
हाथ/और वापस न आ सके बेटी अपने
गांव!" (2)

स्त्री अपनी स्वयं की पहचान के लिए संघर्षरत है। समाज में वह अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाना चाहती है। परिवार की आड़ में जो छिप गया है उससे निकलना चाहती है। जीवन की जो बाधाएं होती हैं उनको पार करके अपने आप को सीमित फलक से विस्तृत फलक पर स्थापित करना चाहती है। इस पर निर्मल पुतुल अपनी कविता 'मेरे एकांत का प्रवेश द्वार' में लिखती हैं-

"यह कविता नहीं
मेरे एकांत का प्रवेश-द्वार है
यही आकर सुस्ताती हूँ मैं
टिकती हूँ यहीं अपना सिर
जिंदगी की भाग-दौड़ से थक-हार कर
.....
मैं कविता नहीं
शब्दों में खुद को रचते देखती हूँ
अपनी काया से बाहर खड़ी होकर
अपना होना।" (3)

कविता केवल शोषण और अत्याचार के लिए ही नहीं, स्त्रियों के बुनियाद को भी मजबूत करने के लिए भी लिखा गया है। कविता के माध्यम से समाज के दोगलेपन को समझने का सन्देश दिया गया है। उनको अपनी बुद्धि का प्रयोग करते हुए मनुष्य के प्रकृति को पहचानने की शिक्षा कविता के माध्यम से दी गयी है। निर्मला पुतुल स्त्री की व्यथा के साथ-साथ उनकी बुनियादी सरोकार को भी कविता में शामिल किया है। उनकी कविता 'बेटियाँ मुर्मू के लिए' में लिखती हैं कि –

"वे दबे-पाँव आते हैं तुम्हारी संस्कृति में
वे तुम्हारे नृत्य की बडाई करते हैं
वे तुम्हारी आँखों की प्रसंसा में कशीदे पढ़ते हैं
वे कौन हैं?
सौदागर हैं वे .....समझो!
पहचानों उन्हें बेटियाँ मुर्मू ....पहचानो!
पहाड़ों पर आग वे ही लगाते हैं
उन्ही की दुकानों पर तुम्हारे बच्चों का
बचपन चीत्कारता है
उन्ही की गाड़ियों पर
तुम्हारी लड़कियां शब्जबाग़ देखने
कलकत्ता और नेपाल के बाजारों में उतरती हैं।" (4)

स्त्री अपनी अस्मिता के लिए सुदृढ़ हो रही है। शोषण और अत्याचार के खिलाफ आवाज़ उठा रही है। अपने जीवन के सभी पहलुओं में संघर्ष करती वह नज़र आ रही है। उनके अस्तित्व की पहचान आदिवासी दर्शन के बुनियादी तत्व जल, जंगल और जमीन पर ही खड़ा है। इनको भी वे बचाना चाहती हैं। वन्दना टेटे स्त्री जीवन में अत्याचार के खिलाफ संघर्ष करने की प्रेरणा देते हुए लिखती हैं –

"उपनामों का बोझ ढोये
खड़ी है जबरन अपनी जमीन पर
हाँ, बड़ी उदंडता से
क्यूँकि फतवा जारी है
उसके खिलाफ
और वह
हुकुमरानों के लारियाये मुहँ
और कुत्तों से तीखे दांतों
के खिलाफ।" (5)

स्त्री अस्मिता बिना पर्यावरण सुरक्षा के नहीं हो सकता। पर्यावरण उनके अस्तित्व की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वे एक दूसरे के पूरक हैं। उन्ही से ही उनकी पहचान है और पहचान ही उनका अस्तित्व है। जल, जंगल और जमीन ही नहीं रहेगा तो उनकी पहचान भी संकट में आ जायेगी। रमणिका गुप्ता स्त्री अस्मिता को पर्यावरण के माध्यम से समझने पर जोर देते हैं। वे लिखती हैं –

"ओ देवदार, तुम्हारे पत्ते
जब भर देते हैं अँधेरे में गंध
सरसराने लगती है ध्वनि तो
सुर में सुर मिलाकर
सारा का सारा जंगल
लगता है गाने
दूर- दूर तक पसर जाता है राह का सन्नाटा
डरने लगता है मन
क्या तुम्हे याद आता है
शादियों से पहले का दुर्दम दमन।" (6)

स्त्रियाँ अपने आत्मसम्मान की रक्षा हेतु हमेशा आत्ममुखर रही है। वे अपनी जड़ मजबूत करना चाहती है ताकि कोई भी उनको उखाड़ न सके। वे अपनी अस्तित्व की लडाई पहले भी लड़ रही थी, आज भी लड़ रही है बिना थके। वे उम्मीद बिना छोड़े हक की लड़ाई लड़ रही है। एक वीर पुरुष की भाँति आदिवासी महिलाएं भी अपनी आत्मसम्मान के लिए संघर्ष कर रही है। अनुज लुगुन अपनी कविता 'उलगुलान की औरतें' में आत्मसम्मान के लिए लड़ाई करती स्त्रियों पर लिखते हैं की –

"वे उतनी ही लड़ाकू थी
जितना की उनका सेनापति
वे अपनी खूबसूरती से
कहीं ज्यादा आक्रामक थी
अपने जुड़े में उन्होंने ईचा बा की जगह
साहस का फुल खोसा था
उम्मीद की तरह पिरोया था
हक की लड़ाई में
उन्होंने बोया था आत्मसम्मान का बीज।" (7)

आदिवासी स्त्रियाँ वीर, साहसी, संघर्षशील, जुझारूपन, परिश्रमी, दयालु और प्रेम, ममत्व की भावनाओं से ओतप्रोत हैं। वे अपनी अस्तित्व स्थापना हेतु पुरुष के साथ कंधे से कन्धा मिलाकर चलना चाहती है। आदिवासी कवयत्री वंदना टेटे अपनी कविता 'औरत–1' में संघर्षशील औरत को उजागर करती हुई लिखती हैं –

"कोई-कोई मोर्चे पर खड़ी
लड़ रही औरत
भीड़ में अकेली, अनवरत
थकती – टूटती
फिर मजबूत करती खुद को खुद से
खेतों – खलिहानों में
जंगल मरुभूमि में
घर में आँगन में।" (8)

उपसंहार:

उत्तर – औपनिवेशिक का दौर ही अस्मिताओं के मुक्तिकामी संघर्ष का था। आदिवासी साहित्य अपनी संवेदना तथा अस्मिता मूलक भाव-बोध को व्यक्त करता है। शहरीकरण, बाजारीकरण, औद्योगीकरण आदि के दौर में आदिवासी साहित्य की पहचान ही जल, जंगल, जमीन की सुरक्षा ही है, जो अस्मिता की रक्षा की बात भी करता है। यह साहित्य वाचिक परम्परा में प्राप्त 'हाशिये का साहित्य' में प्रतिरोध का स्वर को अभिव्यक्त करता है। आदिवासी साहित्य में स्त्री अस्मिता कई रूपों में देखे जा सकते हैं जैसे शोषण और अत्याचार के खिलाफ संघर्ष, वीरत्व का परिचय, प्रकृति की सुरक्षा, पहचान के लिए संघर्ष आदि। इन सभी से स्त्री अस्मिता को समझा जा सकता है। वे अपने अस्तित्व के साथ-साथ प्रकृति और संस्कृति की सुरक्षा को स्थापित करना चाहती हैं।

****

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. अदिवासी चिंतन की भूमिका, गंगा सहाय मीणा, पृ.सं. 53
2. वही, पृ.सं. 57
3. www.hindwi.org
4. अदिवासी चिंतन की भूमिका, गंगा सहाय मीणा, पृ.सं. 54
5. वही, पृ.सं. 60
6. सं. – फारवर्ड पत्रिका, पृ.सं. 62, मई 2015
7. www.hindwi.org
8. वंदना टेटे! कोनजोगा, प्यारा केरकेट्टा फाउंडेशन, रांची, 2015, पृ.सं. 35